



2026:AHC-LKO:9706

एएफआर

सुरक्षित: दिनांक 11.11.2025

प्रदत्त: दिनांक 09.02.2026

इलाहाबाद उच्च न्यायालय, लखनऊ

धारा 482 के तहत आवेदन संख्या - 8263 / 2025 एवं एक अन्य सम्बद्ध वाद

मो. अज़ीम इदरीशी

....आवेदक(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य (सचिव, गृह विभाग, लखनऊ के माध्यम से) और अन्य

....विपक्षी(गण)

आवेदक(गण) के अधिवक्ता : रत्नेश कुमार अग्निहोत्री, रंजना अग्निहोत्री

विपक्षी(गण) के अधिवक्ता : जी.ए., संदीप तेवारी

माननीय न्यायमूर्ति तेज प्रताप तिवारी

1. वर्तमान याचिकाएँ दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत दाखिल की गई हैं, जिनका उद्देश्य पूरक आरोप-पत्र संख्या 2 दिनांक 02.08.2024 से उत्पन्न सत्र परीक्षण संख्या 300/2025 की कार्यवाही को निरस्त कराना है, जो कि मुकदमा अपराध संख्या 0041/2024 दिनांक 28.01.2024 से संबंधित है, जो भारतीय दण्ड संहिता की धारा 328, 376घ, 406 तथा अवैध धार्मिक परिवर्तन प्रतिषेध अधिनियम, 2021 की धारा 5(1) के अंतर्गत थाना गाज़ीपुर, जनपद लखनऊ में दर्ज किया गया था तथा जो विशेष न्यायाधीश, पाँक्सो अधिनियम-III, लखनऊ की न्यायालय में (राज्य उत्तर प्रदेश बनाम मोहम्मद अज़ीम इदरीशी) शीर्षक से लंबित है

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



तथा सम्बद्ध वाद में आवेदक के विरुद्ध आपराधिक वाद संख्या 312/2004, एफ.आई.आर. संख्या 114/2004 (राज्य उत्तर प्रदेश बनाम ओम प्रकाश), जो भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 420, 504, 506 के अंतर्गत थाना सिधौली, जनपद सीतापुर में पंजीकृत है, में आवेदक के आपराधिक अभियोजन को भी निरस्त कराने हेतु, साथ ही दिनांक 17.11.2006 के संज्ञान आदेश, दिनांक 01.07.2025 के आक्षेपित आदेश तथा उनके परिणामस्वरूप उत्पन्न समस्त कार्यवाहियों को, जो आवेदकों के विरुद्ध पूरक आरोप-पत्र संख्या 2 दिनांक 02.08.2024 से उत्पन्न सत्र परीक्षण संख्या 300/2025, मुकदमा अपराध संख्या 0041/2024 दिनांक 28.01.2024, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 328, 376डी, 406 तथा अवैध धार्मिक परिवर्तन प्रतिषेध अधिनियम, 2021 की धारा 5(1) के अंतर्गत थाना गाज़ीपुर, जनपद लखनऊ में दर्ज वाद से संबंधित हैं और जो विशेष न्यायाधीश, पाँक्सो अधिनियम-III, लखनऊ की न्यायालय में (राज्य उत्तर प्रदेश बनाम मोहम्मद अज़ीम इदरीशी) शीर्षक से लंबित हैं, निरस्त कराने तथा आगे की कार्यवाही पर स्थगन प्रदान करने के लिए प्रस्तुत की गई हैं।

तथ्यात्मक विवरण

2. आपराधिक वाद संख्या 312/2024 के विवरणों को संक्षेप में छोड़ते हुए, दिनांक 25.09.2004 को ओम प्रकाश के विरुद्ध दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अंतर्गत एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई। एफ.आई.आर. के कथनानुसार, अभियुक्त ने बेईमानीपूर्वक तथा कपटपूर्ण साधनों द्वारा शिकायतकर्ता श्रीमती सुहागवती, जो कि एक निरक्षर महिला हैं, की दिनांक 06.02.1984 की विक्रय विलेख (बैनामा) प्राप्त कर ली। ओम प्रकाश ने उक्त विक्रय विलेख का उपयोग भागीरथ ग्रामीण बैंक, शाखा सिधौली, जनपद सीतापुर से ₹1,00,000/- (केवल एक लाख रुपये) के ऋण खाते में प्रतिभूति/गारंटी के रूप में किया।

3. वर्ष 2024 के मुकदमा अपराध संख्या 0041 की एफ.आई.आर. के कथनानुसार, सूचनाकर्त्री ने आरोप लगाया कि उसके साथ निहाल नामक व्यक्ति द्वारा बलात्कार किया गया, जिसने उक्त घटना का एक वीडियो भी बना लिया। उक्त वीडियो के आधार पर उसने उसे धमकाया तथा उससे ₹3,00,000/- (तीन लाख रुपये) की धनराशि वसूल की। एक अवसर पर वह अज़ीम नामक व्यक्ति के साथ आया, जिसे सूचनाकर्त्री ने उसके चेहरे से पहचान लेने का दावा किया है, और उक्त अज़ीम ने भी उसे ब्लैकमेल करके उसके साथ बलात्कार किया।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



मुद्दा

4. दोनों मामलों में एक ही मुद्दा विचाराधीन है कि पुलिस अधिकारी ने वास्तविक अभियुक्त की सही पहचान सुनिश्चित किए बिना तथा उसकी पहचान का सत्यापन किए बिना, तथ्यात्मक त्रुटि के कारण एक निर्दोष व्यक्ति को गिरफ्तार कर लिया।

5. क्या दोनों मामलों में की गई गिरफ्तारी वास्तविक अभियुक्त की सही पहचान के सत्यापन के अभाव से ग्रस्त है, जिसके परिणामस्वरूप पुलिस की ओर से हुई तथ्यात्मक त्रुटि के कारण एक निर्दोष व्यक्ति को गिरफ्तार कर लिया गया।

आवेदकों की ओर से प्रस्तुति

6. आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि आवेदक किसी भी प्रकार से शिकायतकर्ता को नहीं जानते हैं। उनके बीच कोई बातचीत अथवा संपर्क नहीं था। गारंटर के अनुरोध पर बैंक ने ओम बीज भण्डार, सिधौली, जनपद सीतापुर (उधारकर्ता) को ओवरड्राफ्ट तथा/अथवा ऋण खाते के रूप में ₹1,00,000/- (केवल एक लाख रुपये) की कुल सीमा तक बैंकिंग सुविधाएँ प्रदान की थीं अथवा प्रदान करने पर सहमति व्यक्त की थी। ओम प्रकाश वास्तविक अभियुक्त था, जबकि आवेदक ओम प्रकाश विश्वकर्मा है। वह निर्दोष है तथा दुर्भावनापूर्ण अभियोजन का सामना कर रहा है। विद्वान अधिवक्ता यह भी प्रस्तुत करते हैं कि आवेदक न तो उक्त फर्म/कम्पनी का स्वामी है और न ही उसके नाम से कोई बैंक खाता है। वह एक लिपिक (क्लर्क) है तथा निर्धन व्यक्ति(ओं) की श्रेणी में आता है।

7. आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि विवेचना अधिकारी आवेदकों की ओर से किए गए किसी विशिष्ट कृत्य अथवा चूक को इंगित करने में विफल रहा है। विवेचना के दौरान आवेदकों के विरुद्ध दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अंतर्गत दिए गए बयानों के रूप में कोई साक्ष्य अथवा सामग्री उपलब्ध नहीं है। आवेदकों के विरुद्ध लगाए गए आरोप असत्य, भ्रान्तिपूर्ण तथा मनगढ़ंत हैं।

8. आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि विद्वान मजिस्ट्रेट ने दिनांक 17.11.2006 का आदेश पारित करते हुए अत्यन्त यांत्रिक ढंग से, बिना किसी न्यायिक मंथन के तथा विधि के स्थापित सिद्धांतों की पूर्णतः अवहेलना करते हुए संज्ञान ग्रहण किया है। वह आगे प्रस्तुत करते हैं कि निर्दोष आवेदक पी.डब्ल्यू.-1 (सुहागवती, शिकायतकर्ता) के दिनांक

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



09.01.2006 को अभिलिखित बयान पर अपना भरोसा रखता है, जिसमें शिकायतकर्ता ने कहा है— "मेरा बैनामा भगौती देवी से बदल गया था, जो मेरी पड़ोसी थी, और भगौती देवी ने आगे मेरा बैनामा अपने पुत्र अर्थात् ओम प्रकाश को दे दिया, जिसने आगे मेरे बैनामे के आधार पर ऋण ले लिया।" यह बयान स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि वास्तविक अभियुक्त अर्थात् ओम प्रकाश, सोहन लाल एवं भगौती देवी का पुत्र है, जबकि निर्दोष आवेदक की माता का नाम रामरती है, जो यह दर्शाता है कि आवेदक को वास्तविक अभियुक्त के रूप में गलत तरीके से चिन्हित कर लिया गया है।

विपक्षी पार्टी की ओर से प्रस्तुति

9. राज्य की ओर से विद्वान ए.जी.ए. प्रस्तुत करते हैं कि विवेचना अधिकारी ने नामजद अभियुक्त ओम प्रकाश पुत्र सोहनलाल, निवासी मोहल्ला प्रेम नगर, थाना सिधौली, जनपद सीतापुर के संबंध में विस्तृत जांच की, जिसके दौरान यह तथ्य प्रकाश में आया कि ओम प्रकाश पुत्र सोहनलाल की माता का नाम भगवती देवी था, जो मोहल्ला प्रेम नगर, थाना सिधौली, जनपद सीतापुर की स्थायी निवासी थीं तथा उनका लगभग 01 वर्ष 06 माह पूर्व निधन हो चुका था। वर्तमान में उसका परिवार लखनऊ में निवास कर रहा है और इसी कारण विवेचना अधिकारी वास्तविक अभियुक्त ओम प्रकाश के संबंध में सही जानकारी प्राप्त नहीं कर सका।

10. विद्वान ए.जी.ए. आगे प्रस्तुत करते हैं कि यह तथ्यात्मक त्रुटि इसलिए हुई क्योंकि नामजद अभियुक्त/मृतक ओम प्रकाश तथा विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए ओम प्रकाश—दोनों के पिता का नाम समान था। गैर-जमानती वारंट में उल्लिखित पते पर रहने वाले व्यक्तियों द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर ओम प्रकाश पुत्र सोहनलाल, निवासी शम्भूनाथ कॉलोनी, थाना सैरपुर, जनपद लखनऊ, स्थायी निवासी ग्राम काशीपुर, थाना सिधौली, जनपद सीतापुर को दिनांक 01.07.2025 को गिरफ्तार किया गया तथा उसे विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया।

अवलोकन

11. आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता, विपक्षी पक्ष संख्या-2 के विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य की ओर से विद्वान ए.जी.ए. को सुना गया और अभिलेख का अवलोकन किया गया।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



12. प्रथम दृष्टया, उन प्रासंगिक विधिक उपबंधों को फिर से पेश करना उचित होगा जिनके अंतर्गत वर्तमान आपराधिक विविध आवेदन प्रस्तुत किया गया है तथा गिरफ्तारी से संबंधित विधि का भी उल्लेख आवश्यक है (दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 – उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का संरक्षण, भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 तथा भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (बीएनएसएस) की धारा 35)।

धारा 528 बी.एन.एस.एस./धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता:-

"इस संहिता में निहित कोई भी बात उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों को सीमित करने अथवा प्रभावित करने वाली नहीं मानी जाएगी, जिससे वह ऐसे आदेश पारित कर सके जो इस संहिता के अधीन किसी आदेश को प्रभावी बनाने के लिए, अथवा किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, अथवा अन्यथा न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हों।"

अनुच्छेद 21. जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संरक्षण :- "किसी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।"

"धारा 35. वे परिस्थितियाँ जिनमें पुलिस बिना वारंट के गिरफ्तारी कर सकती है।

(1) कोई भी पुलिस अधिकारी, किसी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना तथा बिना वारंट के, किसी व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकता है—

(बीए) जिसके विरुद्ध यह विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई हो कि उसने कोई संज्ञेय अपराध किया है, जो ऐसे कारावास से दण्डनीय है जिसकी अवधि सात वर्ष से अधिक तक बढ़ाई जा सकती है, चाहे वह जुर्माने सहित हो या बिना जुर्माने के, अथवा जो मृत्युदण्ड से दण्डनीय हो; और पुलिस अधिकारी को उस सूचना के आधार पर यह विश्वास करने का कारण हो कि उक्त व्यक्ति ने वह अपराध किया है।"

13. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों से यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित होता है कि यद्यपि आवेदकों का नाम अभियुक्त व्यक्ति के नाम के समान है, तथापि वर्तमान मामले में आवेदक वास्तविक अभियुक्त नहीं हैं। विचाराधीन गैर-जमानती वारंट में पूर्ण पहचान संबंधी विवरण, जैसे कि माता का नाम, अंकित नहीं है। वारंट में इस प्रकार की कमी तथा समुचित

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



सत्यापन के अभाव के कारण पुलिस अधिकारियों से तथ्यात्मक त्रुटि हुई और उन्होंने आवेदकों को, जो कि निर्दोष व्यक्ति हैं, गिरफ्तार कर लिया।

14. अभिलेख पर ऐसा कोई सामग्री उपलब्ध नहीं है जिससे यह स्थापित हो सके कि आवेदक वही व्यक्ति हैं जिनके विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही प्रारम्भ की गई थी। गलत पहचान के कारण किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता से वंचित किया जाना विधि की दृष्टि में स्वीकार्य नहीं है तथा यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त व्यक्तिगत स्वतंत्रता की गारंटी के मूल आधार पर प्रत्यक्ष आघात करता है।

“45. रवीन्द्र नाथ घोषाल बनाम कलकत्ता विश्वविद्यालय, प्रकाशित (2002) 7 एससीसी 478 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित प्रतिपादित किया :

न्यायालयों पर नागरिकों की सामाजिक आकांक्षाओं की पूर्ति का दायित्व है, अतः उन्हें सार्वजनिक विधि की कार्यवाही में क्षतिपूर्ति को हर्जाने के रूप में प्रदान करने के साधन का प्रयोग करना चाहिए। परिणामस्वरूप, जब न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 32 एवं 226 के अंतर्गत मूल अधिकारों के प्रवर्तन अथवा संरक्षण की मांग करने वाली कार्यवाहियों में उपयुक्त राहत प्रदान करते हुए क्षतिपूर्ति प्रदान करता है, तब वह सार्वजनिक विधि के अंतर्गत ऐसा अपराधकर्ता को दण्डित करने तथा उस सार्वजनिक अन्याय के लिए राज्य की जिम्मेदारी निर्धारित करने के उद्देश्य से करता है, जिसने नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा करने के अपने सार्वजनिक कर्तव्य का निर्वहन करने में विफलता प्रदर्शित की है। किन्तु यह मान लेना उचित नहीं होगा कि प्रत्येक लोक सेवक द्वारा सार्वजनिक कर्तव्य के प्रत्येक छोटे उल्लंघन के कारण न्यायालय, सार्वजनिक विधि की कार्यवाही के सिद्धांत को लागू करते हुए, संविधान के अनुच्छेद 226 एवं 32 के अंतर्गत दायर याचिका में क्षतिपूर्ति प्रदान कर देगा। इसलिए संविधान के अनुच्छेद 226 एवं 32 के अंतर्गत अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करते हुए न्यायालय केवल इस आधार पर लोक प्राधिकारियों के विरुद्ध हर्जाना प्रदान नहीं करेगा कि उनके द्वारा पारित कोई आदेश बाद में अधिकार क्षेत्र से परे सिद्ध हो गया, अथवा उनके कर्तव्यों के निर्वहन में कोई निष्क्रियता रही हो, जब तक कि उसमें दुर्भावना अथवा जानबूझकर किया गया दुरुपयोग विद्यमान न हो। उदाहरणात्मक हर्जाना प्रदान किए जाने से पूर्व यह

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



प्रदर्शित किया जाना आवश्यक है कि संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत प्रदत्त किसी मूल अधिकार का लोक पदाधिकारियों द्वारा मनमाने अथवा सनकपूर्ण आचरण के कारण उल्लंघन हुआ है तथा पीड़ित व्यक्ति उस कृत्य का असहाय शिकार था।”

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **जोगिंदर कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य** में, जो (1994) 4 एससीसी 260 में प्रकाशित है, अनुच्छेद 20 में निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित किए हैं। अनुच्छेद में उल्लिखित सुझावों को नीचे उद्धृत एवं पुनरुत्पादित किया जा रहा है—

“20. भारत में, राष्ट्रीय पुलिस आयोग की तृतीय रिपोर्ट के पृष्ठ 32 में भी यह सुझाव दिया गया था :

‘किसी संज्ञेय अपराध के अन्वेषण के दौरान गिरफ्तारी निम्नलिखित परिस्थितियों में से किसी एक अथवा अधिक के होने पर न्यायोचित मानी जा सकती है :

(i) मामला हत्या, डकैती, लूट, बलात्कार आदि जैसे गंभीर अपराध से संबंधित हो तथा अभियुक्त को गिरफ्तार कर उसकी गतिविधियों को नियंत्रण में रखना आवश्यक हो, ताकि आतंकग्रस्त पीड़ितों में विश्वास उत्पन्न किया जा सके।

(ii) अभियुक्त के फरार होकर विधिक प्रक्रिया से बच निकलने की संभावना हो।

(iii) अभियुक्त हिंसक व्यवहार का अभ्यस्त हो तथा उसकी गतिविधियों को नियंत्रित न किए जाने पर उसके द्वारा और अपराध किए जाने की संभावना हो।

(iv) अभियुक्त आदतन अपराधी हो तथा अभिरक्षा में न रखे जाने पर उसके द्वारा पुनः इसी प्रकार के अपराध किए जाने की संभावना हो।

यह वांछनीय होगा कि विभागीय निर्देशों के माध्यम से यह अनिवार्य किया जाए कि गिरफ्तारी करने वाला पुलिस अधिकारी, गिरफ्तारी के कारणों को भी केस डायरी में अंकित करे, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि उसने निर्दिष्ट दिशा-निर्देशों का पालन किया है.....”

16. सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो के मामले में, जो (2022) 10 एससीसी 51 में प्रकाशित है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भी धारा 41 के संबंध में अपने निर्णय के अनुच्छेद 23 में निम्नलिखित घोषणा की, जिसे नीचे पुनरुत्पादित किया जा रहा है :-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



"23. संहिता के अध्याय-V के अंतर्गत धारा 41 व्यक्तियों की गिरफ्तारी से संबंधित है। इस उपबंध के निर्देशात्मक स्वरूप से स्पष्ट है कि किसी संज्ञेय अपराध के मामले में भी गिरफ्तारी अनिवार्य नहीं है। यदि अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि किसी व्यक्ति ने ऐसा संज्ञेय अपराध किया है जो सात वर्ष से कम अवधि के कारावास से दण्डनीय है अथवा जिसकी सजा सात वर्ष तक बढ़ाई जा सकती है, चाहे वह जुर्माने सहित हो या बिना जुर्माने के, तो गिरफ्तारी तभी की जा सकती है जब अधिकारी इस बात से संतुष्ट हो कि यह विश्वास करने अथवा संदेह करने का कारण है कि उक्त व्यक्ति ने अपराध किया है तथा उसकी गिरफ्तारी आवश्यक है। ऐसी आवश्यकता इस उद्देश्य से उत्पन्न होती है कि आगे किसी अन्य अपराध के किए जाने को रोका जा सके, उचित विवेचना सुनिश्चित की जा सके तथा अभियुक्त को फरार होने अथवा साक्ष्यों के साथ छेड़छाड़ करने से रोका जा सके। उसे इस उद्देश्य से भी गिरफ्तार किया जा सकता है कि वह किसी व्यक्ति को किसी प्रकार का प्रलोभन, धमकी अथवा वादा न दे, जिससे वह व्यक्ति संबंधित तथ्यों का खुलासा न्यायालय अथवा पुलिस अधिकारी के समक्ष करने से विरत हो जाए। गिरफ्तारी की आवश्यकता का एक अन्य आधार यह भी हो सकता है कि गिरफ्तारी के उपरांत न्यायालय के समक्ष उसकी उपस्थिति सुनिश्चित करना आवश्यक हो तथा अन्यथा उसकी उपस्थिति सुनिश्चित न की जा सके।"

इस विषय पर अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य, जो (2014) 8 एससीसी 273 में प्रकाशित है, के निर्णय पर भी भरोसा किया गया।

17. राष्ट्रीय पुलिस आयोग की तृतीय रिपोर्ट में दिए गए सुझावों के संदर्भ में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने जोगिंदर कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (उपरोक्त) में कहा कि ये दिशा-निर्देश केवल भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त व्यक्तिगत स्वतंत्रता की गारंटी के सहगामी हैं। किसी व्यक्ति को केवल इसलिए गिरफ्तार नहीं किया जा सकता कि पुलिस अधिकारी के पास ऐसा करने की विधिक शक्ति है। गिरफ्तारी करने की शक्ति का अस्तित्व एक बात है, जबकि उस शक्ति के प्रयोग का औचित्य बिल्कुल दूसरी बात है। पुलिस अधिकारी को केवल अपनी शक्ति के आधार पर नहीं, बल्कि गिरफ्तारी के औचित्य को भी सिद्ध करने में सक्षम होना चाहिए। किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी तथा उसे पुलिस लॉक-अप में निरुद्ध किए जाने से उसकी प्रतिष्ठा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



और आत्मसम्मान को अपूरणीय क्षति पहुँच सकती है। किसी व्यक्ति के विरुद्ध अपराध करने का मात्र आरोप लगाए जाने के आधार पर नियमित या यांत्रिक ढंग से गिरफ्तारी नहीं की जा सकती। किसी पुलिस अधिकारी के लिए यह विवेकपूर्ण होगा कि वह नागरिक के संवैधानिक अधिकारों की रक्षा के हित में, तथा संभवतः अपने स्वयं के हित में भी, शिकायत की वास्तविकता और सद्भावना के संबंध में कुछ जांच-पड़ताल कर उचित संतुष्टि प्राप्त किए बिना तथा व्यक्ति की अपराध में संलिप्तता और उसकी गिरफ्तारी की आवश्यकता के संबंध में युक्तिसंगत विश्वास स्थापित किए बिना गिरफ्तारी न करे। किसी व्यक्ति को उसकी स्वतंत्रता से वंचित करना अत्यंत गंभीर विषय है। पुलिस आयोग की सिफारिशें केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता और स्वाधीनता के मौलिक अधिकार से उत्पन्न संवैधानिक परिणामों को प्रतिबिंबित करती हैं। कोई व्यक्ति केवल इस संदेह के आधार पर कि वह किसी अपराध में संलिप्त हो सकता है, गिरफ्तारी के लिए उत्तरदायी नहीं हो जाता। गिरफ्तारी करने वाले अधिकारी की राय में ऐसा कोई युक्तिसंगत औचित्य होना चाहिए जिससे यह प्रतीत हो कि उक्त गिरफ्तारी आवश्यक तथा न्यायोचित है।

18. उपरोक्त उद्धृत मामलों, संबंधित विधिक प्रावधानों तथा वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए यह परिलक्षित होता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि संवैधानिक न्यायालय क्षतिपूर्ति प्रदान कर सकते हैं। इस संदर्भ में **रुदुल शाह बनाम बिहार राज्य, जो (1983) 4 एससीसी 141** में प्रकाशित है, के निर्णय के अनुच्छेद 1 एवं 11 पर भरोसा किया जाना उपयुक्त होगा, जिन्हें नीचे पुनरुत्पादित किया जा रहा है-

"चंद्रचूड़, मुख्य न्यायाधीश (मुख्य न्यायाधीश) – यह रिट याचिका अत्यंत दयनीय एवं चिंताजनक परिस्थितियों को उजागर करती है। यद्यपि याचिकाकर्ता को बिहार के मुजफ्फरपुर स्थित सत्र न्यायालय द्वारा दिनांक 3 जून, 1968 को दोषमुक्त कर दिया गया था, तथापि उसे दिनांक 16 अक्टूबर, 1982 को जेल से रिहा किया गया, अर्थात् उसकी दोषमुक्ति के 14 वर्षों से भी अधिक समय पश्चात्। इस बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका के माध्यम से याचिकाकर्ता ने इस आधार पर अपनी रिहाई की मांग की है कि जेल में उसका निरुद्ध रखा जाना अवैध है। उसने पुनर्वास, चिकित्सा उपचार हेतु होने

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



वाले व्ययों की प्रतिपूर्ति तथा अवैध कारावास के लिए क्षतिपूर्ति जैसे कुछ सहायक अनुतोषों की भी मांग की है।

11. बिहार सरकार द्वारा याचिकाकर्ता को पहुँचाई गई गंभीर क्षति को ध्यान में रखते हुए, हमारा मत है कि अंतरिम उपाय के रूप में राज्य को याचिकाकर्ता को पहले से भुगतान की जा चुकी ₹5,000/- (रुपये पाँच हजार) की राशि के अतिरिक्त ₹30,000/- (रुपये तीस हजार) की और राशि अदा करनी चाहिए। उक्त राशि आज से दो सप्ताह के भीतर अदा की जाएगी। बिहार सरकार भुगतान करने के लिए सहमत है, तथापि हमें यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि हमारा यह आदेश उनकी सहमति पर आधारित नहीं है।"

19. उपरोक्त की गई चर्चा तथा पूर्वोक्त न्यायिक निर्णयों एवं विधिक प्रावधानों के संदर्भों को दृष्टिगत रखते हुए, यह न्यायालय सुविचारित मत का है कि दिनांक 01.07.2025 का आक्षेपित आदेश, दिनांक 17.11.2006 का संज्ञान आदेश तथा आपराधिक वाद संख्या 312/2004 (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम ओम प्रकाश) में आवेदक के विरुद्ध की गई समस्त परिणामी कार्यवाहियाँ, तथा मुकदमा अपराध संख्या 0041/2024 (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मोहम्मद अज़ीम इदरीशी) से संबंधित सत्र परीक्षण संख्या 300 वर्ष 2025 में आवेदक के विरुद्ध की गई कार्यवाहियाँ निरस्त किए जाने योग्य हैं और वर्तमान आवेदन स्वीकार किए जाने योग्य हैं।

20. तदनुसार, उपरोक्त उल्लिखित आक्षेपित आदेश निरस्त किए जाते हैं और आवेदन स्वीकार किए जाते हैं।

21. जहाँ तक पुलिस द्वारा आवेदकों की अवैध गिरफ्तारी का प्रश्न है, पुलिस आयुक्त, लखनऊ तथा पुलिस अधीक्षक, सीतापुर को निर्देशित किया जाता है कि दोषी पुलिस अधिकारी/अधिकारियों-कर्मचारियों द्वारा की गई ऐसी लापरवाहीपूर्ण कार्यवाही के संबंध में उचित एवं विधिसम्मत कार्रवाई करें तथा आज की तिथि से दो माह के भीतर इस न्यायालय के समक्ष अनुपालन प्रतिवेदन प्रस्तुत करें।

22. जहाँ तक आवेदकों द्वारा झेली गई क्षति की प्रकृति का संबंध है, आवेदक उपरोक्त विवेचित विधिक पहलुओं के आलोक में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट क्षेत्राधिकार का आह्वान करके उपयुक्त अनुतोष प्राप्त करने के लिए स्वतंत्र होंगे।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



23. इस आदेश की एक प्रति इस न्यायालय के निबंधक (अनुपालन) के माध्यम से पुलिस आयुक्त, लखनऊ तथा पुलिस अधीक्षक, सीतापुर को प्रेषित की जाए।

(तेज प्रताप तिवारी, न्यायमूर्ति)

09 फ़रवरी 2026

पी.एस.

Translated Version. Not For Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।